ISSN-2230-7540

हिन्दी साहित्य और मानव मूल्य

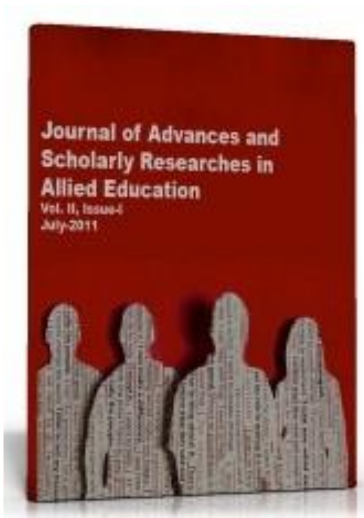

Dr. Hemlata Sharma
Astt. Prof. Hindi, J. C. Women College, Karnal

मानव : व्युत्पत्तिपरक अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप :

मानव का उत्पन्न होना एक विवादास्पद विषय है। मनुष्य जाति की उत्पत्ति कब, किस काल में हुई, कुछ कहना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। विद्वानों ने स्वः कल्पना आधर पर अनेक मतों का अवगाहन कर व इस क्षेत्रा में नित–नूतन परिभाषाओं के आधर पर प्रामाणिकता के लिए अथक प्रयासरत हैं और वह क्रम अद्यतन की सुचारू रूपेण चलायमान है।

जब हम मानव के संबंध में बात करते हैं तो निश्चय ही हमारा अभिप्राय उस जीवधरी से होता है जिस तक आकर समस्त प्राणी जगत् का भौतिक विकास अवरू(हो गया है। विकासवाद सि(ांत के अनुसार ऑर्गन, यूटान आदि नस्ल के बंदर मानव के पूर्वज है। फआज ;ऑर्गन, यूटान और अन्यद्ध 'वानरों का विकास' के सि(ांत के लागू होने के साथ मानव बनने का मार्ग पूर्णतः अवरूद्ध हो गया है।य1

'विकास के सि(ांत' के लागू होने से जो जीव जिस भौतिक अवस्था में था, उसी में रह गया और मानव तक पहुँचकर प्रकृति ने अपने जैविक विकास में पूर्णता प्राप्त कर ली। प्रकृति में इस जैविक विकास की अवरूद्धता के साथ ही एक नए प्रकार के विकास का सूत्रापात हुआ! इस विकास को हम 'मानवता के बौद्धिक विकास' की संज्ञा देते हैं। अपनी इस बौद्धिकता तथा चिन्तनशीलता के कारण ही मनुष्य 'होमेसेपियन'; ज्ञान–युक्त प्राणीद्ध कहलाता है। यहाँ यह अभिप्रायः नहीं है कि मानवेत्तर प्राणियों में बुद्धि शून्य के बराबर होती है। इस दिशा में हुए शोध के आधर पर अनेक प्राणियों में बुद्धि का होना प्रमाणित हो

ISSN-2230-7540

चुका है, लेकिन इस तथ्य को भी उपेक्षित नहीं किया जा सकता कि उनमें बुद्धि चिन्तन के स्तर तक विकसित नहीं होती, वह केवल मानव में ही संभव है।

अपनी चिन्तनशीलता और विवेक बुद्धि द्वारा मानव ने अपना बहुविध विकास किया है, उसके इस विकास को देखते हुए आज यह विश्वास भी करना कठिन होता है कि मनुष्य अन्य पशुओं की भांति ही एक पशु ही था। मानव का यह सारा विकास उस मनस्तत्त्व और परस्पर सहयोग द्वारा ही हुआ है। सभी मनुष्यों का एक सामाजिक रूप में विभिन्न ध्रातलों पर चिन्तन करते हुए अपना विकास करना स्वाभाविक भी था, क्योंकि मनुष्य अब पशु जगत् में नहीं रह सकता था।

फ्मनस्तत्व की प्रधनता को स्वीकार करते हुए यह माना जा चुका है कि मनुष्य तक आकर विकास की धरणा मौलिक रूप से परिवर्तित हो जाती है। पशुबल की अपेक्षा मनोबल और प्रतिस्पर्ध के स्थान पर सहयोग महत्वपूर्ण हो उठता है। स्वार्थ की भावना मर्यादित होकर सामाजिक स्वरूप ग्रहण करने लगती है और मानव नियति के निर्धरण में व्यक्ति के साथ समाज की महत्ता भी दृष्टिगोचर होने लगती है।य्2 इसलिए चिन्तन ने सर्वप्रथम मनुष्य को प्राकृतिक जगत से बाहर सामाजिक प्राणी बना दिया। इससे आगे का विविध क्षेत्रीय विकास मानव ने सामाजिक प्राणी के रूप मे ंही किया है।

जैविक श्रेणी में होने के कारण मनुष्य पशु ही है। जैविक ध्रातल पर पशु जगत् में रहते हुए भी उसमें जीवन विकास की दृष्टि से पशु–जगत् से अन्तर हैं। इस अन्तर को इस प्रकार समझा जाता है–फ्निस्संदेह मनुष्य एक पशु है, प्राकृतिक विकास की रचना है, लेकिन एक अन्तर के साथ। वह ही मात्रा ऐसा पशु है जिसके पास एक विज्ञान, एक आचार–शास्त्रा, एक समाज, एक इतिहास और एक संस्कृति है।य्3

इन सभी उपलब्धियों ने उसे पशु से भिन्न ;मानवद्ध स्तर दिया है। यह सब उसने अपने बु(ि विवेक एवं तदनुरूप कर्मशक्ति द्वारा अर्जित किया है। मानव एक बुद्धिमान प्राणी है। मानव को चाहिए कि मेधवियों द्वारा सुनिष्पादित मानव–जीवन के ज्योतिर्मय पथों की रक्षा करें। उन मानव पथों की रक्षा करते हुए उन पथों को विलुप्त न होने दें। मेधवी मानव ने मानव के लिए जीवन के जो अदभुत और समुज्जवल आदर्श स्थापित किए हैं, जो मानवीय मर्यादाएं स्थापित की है, उन पर स्वयं चलना और दूसरों को चलाना यही उनके द्वारा सुनिर्मित, ज्योतिमर्य पथों की रक्षा करना है।

मूल्य : व्युत्पत्तिपरक अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप :

किसी भी वस्तु या विचार के प्रति जब हमारी कोई निश्चित धरणा बन जाती है और वह उस वस्तु या विचार के अनुकूल रहकर समाज में जीवन और पारस्परिक व्यवहार के संबंध में निश्चित हो जाती है तो यही धरणाएं स्थिर होकर मूल्यों को प्रतिष्ठित करने में सहयोग देती हैं, क्योंकि चिन्तन से विचार बनते हैं और विचारों से धराणाओं का जन्म होता है तथा धरणाओं से मूल्यों की सृष्टि होती है। मूल्य समाज सापेक्ष एवं सूक्ष्म अनुभूति है जिसे मानव अपने विवेकपूर्ण निर्णय द्वारा प्रतिष्ठित करता है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते है कि फ्मूल्य किसी पदार्थ की ऐसी विशेषता या खूबी है जिसका ठीक पता चलाने पर चेतना उसकी और एक प्रशंसनीयता के भाव से आकृष्ट होती है और उसकी यथायोग्य प्राप्ति को उचित मानती है।य्4 अतः

मूल्य शब्द अत्यंत कठिन, गहरा एवं जटिल विषय है। इसके समझने के लिए सर्वप्रथम इसकी व्युत्पति व अर्थ का अध्ययन करना समीचीन है।

'मूल्य' शब्द संस्कृति की 'मूल' धतु में 'यत्' प्रत्यय लगाने से निर्मित है, जिसका अर्थ किसी वरूतु के विनिमय में दिया जाने वाले ध्न, दाम, बाजार भाव आदि से है।5

तुलनात्मक दृष्टि से मूल्य शब्द अंग्रेजी भाषा के टंसनम 'वैल्यू' शब्द का समानार्थी है जो लैटिन भाषा के ट।स्त्। ;वेलीराद्ध शब्द से व्युत्पन्न है, जिसका हिन्दी में अर्थ है–अच्छा, उपयोगी, समर्थ, शक्तिशाली या सुन्दर आदि।6 अर्थात् 'मूल्य' शब्द के अर्थ में शिव और सुन्दरम् सन्निहित रहते हैं।

मूल्य के संबध में धरणा है कि फजो कुछ भी इच्छित, वांछित है, वही मूल्य है।7

'नालन्दा विशाल शब्द सागर' के अनुसार मूल्य ;1द्ध किसी वस्तु के खरीदने पर उसके बदले दिए जाने वाला ध्न, दाम, कीमत ;च्तपबमद्ध से है ;2द्ध वह गुण या तत्त्व जिसके कारण किसी वस्तु की महत्ता या मान होता है।8

मानक हिन्दी कोश के अन्तर्गत ;1द्ध अर्थशास्त्रा के अनुसार यह किसी वस्तु की मांग और होनेवाली पूर्ति की मात्राा के आधर हैं ;2द्ध फवह जो कुछ किसी को किसी कारणवश झेलना, भुगतना या बलिदान करना पड़ता है, जैसे अत्याध्कि परिश्रम स्वास्थय–हानि के रूप में चुकाना पड़ता है।9

अतः कहा जा सकता है मूल्य शब्द का प्रयोग विविध् अर्थो में किया जा रहा है। मुख्यतः मूल्य शब्द का प्रयोग अर्थशास्त्रा में वस्तुओं के क्रय–विक्रय के रूप में नीतिशास्त्रा में मानव के जीवन लक्ष्यों तथा मानकों के रूप में समाजशास्त्रा में समाज के आदर्शों के रूप में, साहित्य में साहित्यिक मानदण्ड के रूप में प्रयोग किया जाता है।

मानव मूल्य : एक अवलोकन :

मानव मूल्य सम्बन्धी भारतीय तथा पाश्चात्य अवधरणा का विश्लेषण करते हुए मानव–मूल्यों का स्वरुप प्रदर्शित करने का प्रयत्न किया गया है। मूल्यों का मानव जीवन में विशिष्ट स्थान है। उनका कार्य व्यक्तियों को सामाजिक जीवन के लिए आदर्श रूप में प्रस्तुत करना है। वस्तुतः मूल्य एक मानक है, जिनके आधर पर व्यक्ति सामाजिक व्यवहार की श्रेष्ठता का अनुमान लगाता है। किसी वस्तु, व्यक्ति, विचार या संस्था से किसी व्यक्ति का कैसा सम्बन्ध् है यह उसके मानव–मूल्यों पर आधरित होता है।

मूल्यों के भेद तथा मूल्यों के निर्माण में सहायक कसौटियों को बताते हुए यह स्पष्ट किया गया है कि अनादि काल से आधुनिक काल तक मानव–मूल्य व्यक्ति के व्यक्तित्व, परिवार, समाज, कला, साहित्य, संस्कृति, ध्र्म, दर्शन एवं समस्त जीवन को किसी न किसी प्रकार से प्रभावित करते रहे हैं। मानव–मूल्य आदर्शों तथा दार्शनिक विचारधरा को भी स्पष्ट करते हैं।

ISSN-2230-7540

समाज में मानव मूल्य सदैव, बनते बिगड़ते रहते हैं। आदिम समाज में कतिपय 'मूल्य' रहे हैं, जिन्होंने समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है, लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि वे ही मानव–मूल्य आज के संदर्भ में प्रांसगिक हो। कबिलाई सभ्यता के कुछ पहले से ही भय तथा श्र(ा युक्त ध्र्म को मूल्य की मान्यता प्राप्त हो गई थी, जब तक पूरे समाज की मान्यता ध्र्म को प्राप्त रही तब तक उसे नैतिक माना गया।

मूल्य निर्माण के मूल में मनुष्य की अपूर्णता से पूर्णता की ओर जाने की लालसा है। मानव एक विवेकशील प्राणी है। वह अपनी विवेकशील अर्थात संज्ञानात्मक चेतना के माध्यम से मूल्यों का निर्धरण करता है। मूल्यों का बोध् उसके विकास का क्रम है, जिन तत्वों से मानव जीवन अर्थवान महत्त्वपूर्ण होता है। यह ही मानव जीवन मे वास्तविक मूल्य हैं। वस्तुतः मूल्य एक ऐसा मापदण्ड है जो सम्पूर्ण संस्कृति एवं समाज को अर्थ एवं महत्त्व प्रदान करता है।

'मूल्य' वह वस्तु है जो जीवन को सदैव विकास की ओर ले जाती है। वह वस्तु अन्तिम रूप से तथा स्वलक्ष्य की दृष्टि से मूल्यवान है जो कि व्यक्तियों को विकास अथवा आत्म–विश्वास या आत्म–अनुभूति की ओर ले जाती है।10

मूल्य प्रक्रिया एवं मूल्य परिवर्तन :

मूल्य प्रक्रिया अत्यन्त रोचक एवं अनन्त है और कहीं–कहीं जटिल भी है। इसकी तुलना उस वट वृक्ष से की जा सकती है, जिसकी एक से अनेक जड़े पफैलती हैं : पुरानी जड़ें नष्ट होती रहती हैं और आगे नई विकसित होती रहती हैं अथवा मूल्य पुराने पत्तों अथवा बच्चों के पहले दुध्यिा दांतों की भांति है जो झड़ते हैं और समयानुकूल नयें आते हैं। उनका समय पर झड़ना ही उचित और अनिवार्य हैं। मूल्य भरजीवा पफीनिक्स की भांति होते हैं जो अपनी ही राख में पुनः जीवन ग्रहण करते हैं। मूल्यों का विघटित रूप भावी मूल्यों के लिए खाद का काम करता है। तत्वतः नये मूल्यों का विकास पुराने मूल्यों की आधरशिला पर होता है। 'हेमेन्द्र कुमार पानेरी' के शब्दों में पफ्मूल्य–प्रक्रिया में मनुष्य की चेतना कार्य करती है और मानव की इस चेतना का पहलू सामाजिक होता है इसी से सामाजिक मूल्यों की उत्पत्ति होती है।य11

समाज के आरम्भ के साथ ही मूल्य–प्रक्रिया का सूत्रापात हुआ। यह प्रक्रिया समाज के साथ निरन्तर चलती रहती है। इस प्रक्रिया का ह्रास और विकास समाज के साथ ही होता है। डॉ॰ पुष्पाल आधुनिकता के संदर्भ में बात करते हुए कहते हैं–पफकिसी भी समाज में पारम्परिक और आधुनिक मूल्य युगपत स्थिति में विद्यमान रहते हैं। आधुनिकता के प्रसार से समाज का एक वर्ग विशेष आधुनिक दृष्टि से सम्पन्न होकर नये मूल्यों का प्रश्रय देता है तो दूसरी ओर समाज का वह वर्ग भी आता है जहाँ आधुनिकता का अल्पांश भी नहीं पहुंच पाता और वह वर्ग पुरातनता से ही चिपका रहता है। इनके यहाँ मूल्यों का परिवर्तन लक्षित नहीं किया जा सकता............यदि भारतीय समाज संदर्भ में इस तथ्य की मीमांसा की जाये तो यहाँ पग–पग पर पारंपरिक और आधुनिक मूल्य गलबाहीं डाले मिलेंगे।12

सामाजिक स्थितियों और मूल्यों का अन्योन्याश्रित संबंध् है। मूल्य यदि कई बार सामाजिक स्थितियों को बदलते हैं तो सामाजिक स्थितियों में परिवर्तन आने से मूल्यों में भी परिवर्तन आता है। इसीलिये भी मूल्य शाश्वत नहीं परिवर्तनमान होते हैं। सर्वप्रथम

ISSN-2230-7540

समाज चिंतक सुधरक अथवा दार्शनिक समयानुरूप उत्पन्न होने वाले परन्तु अनचीहने, उपेक्षित नये तत्वों की ओर ध्यान देकर उन्हें प्रश्रय देते हैं और शेष मानव अथवा समाज हित उनका प्रचार–प्रसार करते हैं और अंततः वे विचार अथवा प्रतिमान मूल्यों का रूप धरण करते हैं।

'मूल्य–प्रक्रिया के इतिहास की परम्परा का अध्ययन करने पर दो स्तर भली–भांति उभर कर हमारे सामने आते हैं। विज्ञान की उन्नति के पूर्व का मूल्य स्तर जिसका मूल आधर–धर्मिक चेतना थी और विज्ञानोत्तर मूल्य जिसमें प्रत्येक पारम्परिक मूल्य के आगे प्रश्न चिह्न लगा दिखाई देता है। विज्ञान के आविर्भाव के कारण मूल्यों के आधर के रूप में आध्यात्मिक चेतना का महत्वक्षीण हो गया है। विज्ञान ने नैतिक मूल्यों को भी निराधर सि(कर दिया है। इस वैज्ञानिक हलचल से परंपरागत धर्मिक, दार्शनिक एवं नैतिक मूल्य प्रायः नष्ट हो गये। इसका स्थान नवीन मूल्यों ने ग्रहण किया। अब आध्यात्मिकता के स्थान पर भौतिक परिवेश को अध्कि महत्व दिया जाता है। इस प्रकार मार्क्सवाद, पूंजीवाद, मानवतावाद, बु(िवाद, प्रजातंत्रावाद आदि के मूल्यों का विकास हुआ है। अब पैसा ही सबसे बड़ा मूल्य बन बया है। इसके प्रभाव से व्यक्ति के भावात्मक संबंधी और मूल्यों में भी परिवर्तन आया। प्रेम, करुणा, दया, सेवा आदि के स्थान पर घृणा, ईर्ष्या, द्वेष आदि विकृतियाँ उत्पन्न हुई। विश्व यु(ों के आघात और बाद में निरंतर चलने वाले विश्वव्यापी अन्य अनेक संघर्षो से अब तक के सभी मूल्य टूट गये। नवीन जीवन दर्शन का विकास हुआ नवीन धराणाओं एवं मान्यताओं का जन्म हुआ। जीवन के विभिन्न क्षेत्राों में नयडवाद, डार्विन का विकासवाद, सात्रा का अस्तित्ववाद, तर्कमूलक वस्तुवाद और उपयोगितावाद आदि का उदय हुआ।

साहित्य और मानव मूल्य :

साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्य समाज के अन्तः संघर्ष व उतार–चढ़ावों को एक रचनाकार अपनी कृति के माध्यम से चित्रित करता है। साहित्य का मानव–जीवन से चिरन्तन एवं घनिष्ठ सम्बन्ध है। साहित्य के द्वारा मानव जीवन के विविध रूपों, घटनाओं, समस्याओं भावनाओं विचारों व मानदण्ड़ों को अभिव्यक्ति मिलती है। 'साहित्य' मानव–जीवन सापेक्ष होता है और मानव जीवन साहित्य से प्रेरित एवं परिचालित होता रहता है। गतिशील और विकासशील मानव जीवन में मानव के दृष्टिकोणों, धरणाओं, विचारों और आदर्शो में अथवा उसके जीवन मूल्यों में समय के साथ परिवर्तन आना अनिवार्य है। मानव–मूल्य, मानव–जीवन और समाज को उच्चतर सौंपानों की ओर बढाने में सहायता करते है। हमें एक परिष्कृत तथा श्रेष्ठ जीवन प(ति प्रदान करते हुए एक सुसंस्कृत जीवन की पृष्ठभूमि के निर्माण में भी योगदान देते हैं।

मानव–मूल्यों का साहित्य से क्या संबंध है ? यद्यपि मानव–मूल्य दर्शन–शास्त्रा, समाजशास्त्रा और मनोविज्ञान की विषय सामग्री है, तथापि यह प्रश्न हमारे शोध्कार्य की दृष्टि से सर्वाध्कि महत्त्वपूर्ण है। साहित्य का जन्म सामाजिक परिवेश में होता है। फसाहित्य मानव का ही कृतित्व है और मानवीय चेतना के बहुविध प्रत्युत्तरों ;त्मेचवदेमेद्ध में से एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रत्युत्तर है |13

ISSN-2230-7540

साहित्यकार से भिन्न अन्य सभी विद्वानों का संबंध जीवन तथा संस्कृति के किसी एक पहलू विशेष से होता है जबकि साहित्यकार का दायित्व पूरी संस्कृति के मूल्यात्मक विकास का दायित्व होता है।ॅण्टण्ळैम्थ्वस्क के शब्दों में फ्व्यापकत्तम रूप में साहित्य प्रत्येक आत्यान्तिक प्रकार की वास्तविकताओं के महान् व्यक्तियों की उन वास्तविकताओं के प्रति प्रतिक्रियाओं का लेखा–जोखा है।य्14 यहाँ महान् व्यक्तियों से अभिप्राय जीवन के यथार्थ के पक्ष से हैं। सर्वाध्कि संवेदनशील व्यक्ति होने के कारण साहित्यकार जीवन के यथार्थ को गहराई से पहचानता है। ध्र्मवीर भारती के अनुसार फ्साहित्य वर्तमान समाज–व्यवस्था का एक सांस्कृतिक अंग होता है। वह उस व्यवस्था से प्रभावित होता है, और उसे प्रभावित करता है। समाज द्वारा मान्य नैतिक धरणाओं की कसौटी पर कसने का प्रयास नहीं है और न साहित्य से सामाजिक समस्याओं के समाधन मांगने का प्रयास ही किया है।15

सम्पूर्ण साहित्य का इतिहास इसी बात की पुष्टि करता है कि जब–जब मूल्य रूढ़ होकर किसी भी युग की नई दृष्टि और नए यथार्थ के प्रति उदासीन एवं निरुपयोगी हुए हैं, तब तक साहित्यकार ने इस प्रकार की स्थिर रीतियों से संघर्ष किया है। अपने–अपने दायित्वों को पहचाना है। इस प्रकार साहित्य साहित्यकार का अनुभूत सत्य होता है। वह बदलते परिवेश में कलाकार की चेतना के प्रकार का सूचक होता है। उसमें ज्ञान–विज्ञान के प्रभावों के असीम क्षेत्रा, पुराने मूल्यों के विघटन की जानकारी तथा नयी संवेदना और अनुमति की ग्रहणशीलता रहती है। मूल्यों का प्रश्न वास्तव में साहित्य के अभिप्राय, उपलब्धि और उद्देश्य से बंध रहता है।

साहित्यकार की आत्मोपलब्धि दोहरे स्तर पर होती है। अपने पहले रूप मे वह मूल्यों को समझने में समस्त युगीन बोध की प्रक्रिया में से गुजरता है और दूसरे स्तर पर उपलब्ध मूल्यों को साहित्य में नियोजित करता है। वह जीवन का मूल्य–दृष्टा और मूल्य–प्रष्टा दोनों रूपों में साक्षात्कार करता हैं। उसकी दृष्टि में जीवन की महत्ता सै(ांतिक की अपेक्षा व्यवहारिक दृष्टिकोण में अध्कि रहती है। यही कारण है कि साहित्य में प्रयुक्त होकर जीवन मूल्य केवल सि(ांत नहीं रह जाते। शम्भुनाथ सिंह के शब्दों में फ्साहित्य में मानव–मूल्यों की अभिव्यक्ति उसकी तरह सीधी तर्कपूर्ण और वक्तव्य प्रधन नहीं होती जैसी ज्ञान–विज्ञान और नीति, ध्र्म के क्षेत्रा में होती हैं। समस्त साहित्य प्रतीकात्मक होता हैं, जिसमें मानव–मूल्य उपचेतन में से बदलकर चेतना लोक में आ जाते हैं।य्16 इस प्रकार साहित्यकार के लिए जीवन मात्रा वस्तु नहीं होती।

डॉ॰ राजपाल साहित्य में 'मूल्य' के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि फ्साहित्य में जीवन–मूल्य व्यक्ति के माध्यम से अनुभूत सामाजिक धराणाएं है। अतः इनसे सामाजिक जीवन–मूल्यों के प्रति व्यक्ति की प्रतिक्रिया एवं उससे उद्‌भूत मूल्यों के विकास की सम्भावित दिशाओं को भी परख सकते हैं।17

इससे स्पष्ट हो जाता है कि साहित्यकार की आस्था शाश्वत मूल्यों में तो रहती हैं, परन्तु वह सामयिक मूल्यों के प्रति भी सजग रहता है और अपने विवेकानुसार साहित्य में उसका प्रतिपादन करता है।

साहित्य का विषय मानव जीवन है और मानव जीवन का शाश्वत लक्षण है–गतिशील होना अर्थात निरन्तर परिवर्तनशील होना। ऐतिहासिक परिस्थितियों की द्वन्द्वात्मक परिणति में नए जीवन–मूल्यों का निर्माण होता है, जो इतिहास की बदली हुई स्थिति में

जीवन की श्रेष्ठता का मानदण्ड बन जाते हैं। हर ऐतिहासिक परिवर्तन के अवसर पर नये जीवन मूल्यों के निर्धरण की आवश्यकता होती है। यह आवश्यकता भी प्रतिपादित करती है। इसी नियम के कारण भिन्न–भिन्न कालों में भिन्न–भिन्न साहित्यिक मूल्यों की स्थापना होती है।य18

मानव समाज और मानव जीवन में होने वाले परिवर्तन के बावजूद उन मानव–मूल्यों को उजागर करना ही साहित्य का मूल उद्देश्य होता है जो मानव कल्याण की भावना से उत्प्रेरित होते हैं। साहित्य अपने को केवल अतीत और समकालीन संदर्भो प्रश्नों और समस्याओं से नहीं जोड़ता वरन् उनके समाधन के लिए ऐसे मानव–मूल्यों को गढ़ता है, और संवारता है। साहित्य और मूल्यों के रिश्ते को स्पष्ट करते हुए डॉ॰ भगीरथ बडोले ने कहा–फ्साहित्य मूलतः जीवन मूल्यों की अभिव्यक्ति है।19

मानव–जीवन विकासशील है तो उसको समझने की जीवन दृष्टि का विकासशील होना स्वभाविक है और उनसे प्रभावित होना साहित्यिक मूल्यों के निर्माणकारी तत्वों में भी परिवर्तन आएगा। साहित्य मे जीवन की व्यापकता को गहराई से प्रभावित करने की क्षमता होती है। साहित्य में व्यक्त जीवन मूल्यों की समाज द्वारा दी जाने वाली स्वीकृति के संबंध में डॉ॰ शम्भुनाथ सिंह का विचार है कि फ्साहित्य में जीवन मूल्य ऊपर से आरोपित नहीं होते हैं जो उसकी आत्मोपलब्ध्ि की प्रक्रिया में रूपायित होकर अपनी सुन्दरता, उदात्ता और महत्ता के कारण समाज द्वारा जीवन मूल्यों के रूप में स्वीकृत किये जाते हैं।20

प्रत्येक समाज के मूल्य अलग होते हैं, कोई भी रचनाकार समाज विकास की एक विशेष अवस्था में ही साहित्य सृजन करता हैं, चूंकि उस युग के मूल्य और मूल्य प्रक्रिया विशेष तरह की होती है। इसलिए युग परिवर्तन के साथ–साथ मूल्यों में एक सक्रांन्ति की स्थिति उत्पन्न होती है। केदारनाथ सिँह के अनुसार रचनाकार रचना के माध्यम से न केवल पुराने मूल्यों की पड़ताल करता है, बल्कि नए मूल्यों का भी सृजन करता है। रचना यदि आलोचना से भिन्न है और बड़ी है तो इसलिए कि आलोचना तो केवल मूल्यों का विश्लेषण करती हैं, लेकिन रचना मूल्यों का सर्जन करती है। उन्हें क्रिएट ;उनका सृजनद्ध करती है ।21

मानव जीवन में मात्रा मूल्यों की खोज करना ही पर्याप्त नहीं होता, उनकी सही समझ को विकसित करने के लिए उन्हें तलाशना भी होता है। अक्समात् ही आपकी प्राचीन समय से चले आ रहे मानव–मूल्य निरर्थक लगने लगे तो उनमें चीरा लगाकार देखिए, तो आपकी वहाँ जड़ता के स्थान पर प्राण रस के स्त्राोत के दर्शन होंगे। अस्मिता की यही पहचान साहित्य का मूल ध्र्म है। साहित्य की विवेचना में मानव–मूल्यों की चर्चा पृथक रूप से नहीं की जाती, किन्तु इसका अर्थ कदापि यह नहीं कि साहित्य में इसके लिए कोई स्थान नहीं। वस्तुतः साहित्य के विभिन्न तत्वों–विचार, भाव, अनुभूति आदि के अन्तर्गत ही मानव–मूल्य अन्तर्भुक्त रहते हैं।

आज का साहित्यकार ध्न, प्रभुता एवं वैभव की स्पर्ध में मानव–मूल्यों को उतना महत्त्व नहीं दे पा रहा है जितना की उसे देना चाहिए। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि प्रभुता और ध्न की तुलना में और भी मूल्य होते हैं जो जीवन को अध्कि जीने योग्य बनाते हैं और जो ध्रोहर के रूप में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को मिलते हैं। अतः साहित्य का मूल्यांकन मानव–मूल्यों की दृष्टि से होना चाहिए।

एक सच्चे साहित्यकार का दायित्व इसीं में निहित है कि वह जीवन के प्रत्येक मूल्यों में से मानव के उत्थान में सहायक मूल्यों का चुनाव करे तथा जीवन के स्थायी मूल्यों की ओर ले जाने वाली प्रवृतियों के आधर पर साहित्य की सर्जना करें। साहित्कार के लिए सही एवं उत्कृष्ट मानव मूल्यों के चुनाव की जिम्मेदारी प्राथमिक है।

अंत में हम कह सकते हैं कि साहित्य का प्रतिपाद्य–विषय मानव–मूल्य है, जिसमें मानवीय–मूल्यों का विशेष महत्त्व है। मानवीय मूल्यों की चर्चा हमारे शोध–प्रबंध में सामाजिक धर्मिक, नैतिक, राजनैतिक, एवं आर्थिक आधर के अन्तर्गत की जाएगी।

मानव मूल्य : महत्त्व :

मानव मूल्यों का जीवन में बहुत अध्कि महत्त्व होता है। कहा जाता है कि मूल्यों के बिना जीवन न के बराबर है। फ्मूल्य ही जीवन–द्रव्य हैं जिससे मानव संस्कृति रूपी वृक्ष पल्लवित, पुष्पित तथा कलित होता है, इसलिए आज की सांस्कृतिक मानवीय–मूल्यों के परिणाम की ही स्थिति है। मानवता के विकास में मानवीय–मूल्यों का ही हाथ रहा है। वस्तुतः मूल्य विवेक–सम्मत वैचारिक दृष्टिकोण है। व्यक्ति की सामान्य प्राणधरी से मानव होने की ओर कहलाने तक की यात्राा उसकी सामाजिक सभ्यतागत तथा सांस्कृतिक यात्राा है। दूसरे शब्दों में हम उसकी जैविकेतर स्तर पर मूल्य यात्राा कह सकते हैं। इन मूल्यों को ग्रहण कर जहां मनुष्य ने अपने भौतिक जीवन को सुंदर सुखमय, निरामय और समृ(बनाया है और आंतरिक जीवन को उर्ध्व एवं उदात्त बनाया है।22

अतः मूल्यों का मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्रा में महत्त्वपूर्ण स्थान है, भले ही विभिन्न क्षेत्राों में इनका स्वरुप अलग–अलग है। मूल्यों का महत्त्व व्यक्तिगत, सार्वजनिक और राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न रूपों में है। ये मानव समाज में एकता स्थापित करने का कार्य करते हैं। डॉ॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार, फ्जीवन–मूल्यों की सार्थकता इसी में है कि वह जीवन को जीने योग्य बनाते हैं। अनुभूत सत्यों के आधर पर इन मूल्यों का विकास होता है। अतः जीवन मूल्य शाश्वत नहीं होते, अनुभव तथा विवेक द्वारा ही इन्हें ग्रहण किया जाता है।य्23 मूल्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मानव से संबंध्ति है। मानव के अस्तित्व के बिना मूल्यों की और मूल्यों के बिना मानव की कल्पना करना असंभव है। जीवन में मूल्यों की प्रतिष्ठा करना ही मानव की प्रतिष्ठा है।

मानव जीवन में मूल्यों की सत्ता को नकारा नहीं जा सकता। समाज में कोई न कोई मूल्य सभी स्थितियों में अवश्य विद्यमान रहते हैं। मूल्य विहीन समाज, समाज नहीं कहला सकता। ये तो वे अदृश्य आदेश हैं जिनका पालन अपने आप होता रहता है। मानव–समाज मूल्यों का संगठन एवं संकलन है। मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन में मूल्यों का महत्व निर्विवाद है। मूल्यों के सोपानों के सहारे ही मनुष्य अपनी इच्छाओं–आकांक्षाओं एवं आर्दशों को प्राप्त करता है। मूल्यों की जड़ें बहुत गहरी होती है। ये निराधर अथवा कपोल कल्पित नहीं होते, मूल्य जन समाज की वह रीढ़ है जिसके सहारे समाज अस्तित्ववान होता है। किसी समाज की संस्कृति का अध्ययन उस समाज मे प्रचलित मानव–मूल्यों के आधर पर ही संभव है।24

मूल्य व्यक्तित्व को या सामाजिक अंतः प्रक्रिया की व्यवस्था को संगठित करने में सहायक होते हैं, क्योंकि मूल्य कुछ सामान्य आदर्श, लक्ष्य या नीतियों को सामाजिक जीवन में प्रतिष्ठित करते है। पफलस्वरूप सामाजिक संघर्ष की संभावनाएँ या

अनिश्चिताएं कम हो जाती है। जो मानवीय इच्छा की तृप्ति करे वहीं मूल्य है, मूल्य वह वस्तु है जो जीवन को सदैव विकास की ओर ले जाती है। अर्थात मूल्य वह होते हैं जो मानव जीवन के पूर्ण विकास में सहायक होते हैं।

सामाजिक संघटना में इकाई भूत व्यक्ति का योगदान सभी समाजशास्त्रियों ने स्वीकार किया है। यह व्यक्ति इकाई रूप में प्रचलित मूल्यों को जीवन में उतार कर समाज में एकरूपता उत्पन्न करती है। व्यक्तित्व के निर्माण में भी मूल्यों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। मूल्य और मूल्य व्यवस्था व्यक्तित्व–विशेष की व्याख्या करती हैं, व्यक्तित्व के ढांचें को परिचालित करती है। व्यक्तित्व के संचालन में मूल्यों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। उच्चकोटि के व्यक्तित्व का निर्माण, अच्छे मूल्यों के ग्रहण, स्वीकार पर आधरित है। इस प्रकार व्यक्तित्व और मूल्यों का परस्पर घनिष्ठ संबंध है।

राष्ट्रीय स्तर पर भी मूल्यों का अपना महत्त्व है। प्रत्येक राष्ट्र अपने मूल्यों का पालन करने के साथ–साथ उनसे गौरवान्वित भी होता है। इसी के साथ–साथ सामाजिक मूल्य सामाजिक जीवन के रक्षा कवच भी बन जाते हैं। अतः स्पष्ट है कि सम्पूर्ण मानव समाज व मानव कल्याण के लिए समाज में व्याप्त विभिन्न मूल्यों का संरक्षण आवश्यक है। अन्यथा मानव–समाज को संगठित करने का कोई ओर मार्ग, मूल्यों की अतिरिक्त नहीं है। प्रेम, सौन्दर्य और अच्छाई की रक्षा मूल्यों के सरंक्षण से ही संभव है। इन मूल्यों के आधर पर सभ्यता तथा संस्कृति का अवगाहन और परिचय होता है और नए जीवन की सृष्टि होती है।

निष्कर्ष :

सृष्टि के प्रारम्भ काल से ही मानव यथास्थिति का यथेष्ट मूल्यांकन कर मानव की परिभाषा को सार्थक सिद्ध करने में तल्लीन रहा। यह क्रम आज भी अजस्र रूप से चल रहा है। आज सम्पूर्ण मानव जाति मानव को नित्त–नवीन मूल्यों से सरोबार करा रही है जो मानव मूल्यों की तटरक्षक है। अतः मानव मूल्य, मूल्य बोध के अभाव में अंगविहीन सा लगता है। चेतना के विविध आयाम व उनका विस्तरण ही मानव मूल्यों की उच्च कसौटी का मापदण्ड है। अतः प्रयोजनों के विषय में मूल्यबोध दृष्टि प्राप्ति है और यह दृष्टि साध्ना को जन्म देती है। पूर्ण आत्म बोध में चेतना की अभिव्यक्ति ही उसके विकास का लक्ष्य है।

मूल्य ही हमारे जीवन को गतिशीलता, सार्थकता, सौन्दर्य, अभ्युदय, औचित्य प्रदान करने वाले युगानुकूल उर्ध्वमुखी विकासमान तत्व हैं! मूल्य ही समाज के निर्माता हैं तथा संस्कृति को सही आधर प्रदान करने वाले हैं। मूल्य ही किसी समाज की आधरशिला हैं जिन पर किसी समाज का भव्य भवन अवस्थित है। मूल्यों की गरिमा और सौन्दर्य में किसी राष्ट्र की संस्कृति जीवित रहती है। ये मूल्य ही मानवीय सम्बन्धें को स्थिर, व्यवस्थति तथा विकसित करते हैं। मूल्यों में परिवर्तनशीलता की सतत प्रक्रिया जारी रहती है जो युगानुकूल होती है। दया, प्रेम, करूणा, ममता, सहानुभूति हमारी समाज–व्यवस्था के नवीन एवं प्राचीन मानव मूल्य हैं।

हमारे सभी अनुभवों मूल्यों का विचार सन्निविष्ट रहता है। अतः मूल्यों को अनुभव का सारांश भी कहा जा सकता है। अतः मूल्य ऐसी धराणाएँ हैं, जिन्हें हम मानव समाज की सुख–समृद्धि एवं विकास के लिए महत्त्वपूर्ण मानते हैं तथा जिनसे हमारा जीवन

ISSN-2230-7540

अर्थवर्तापूर्ण बनता है। मूल्य मनुष्य के अन्दर निहित गुण, संभावनाएं या शक्तियाँ हैं जिनका विकास मनुष्य के हित में किया जा सकता है। करूणा, प्रेम व त्याग की भावना इत्यादि को जीवन के शाश्वत मूल्य कहा जा सकता है।

GNITED MINDS Journals